विजय चितौरी

सिंचाई जल प्रबंधन हेतु बदलना होगा खेती-बाड़ी का तौर-तरीका

भारतीय कृषि में हरित क्रांति एक महान घटना रही है। इसने देश को भुखमरी से उबारा और अनाज के मामले में देश को आत्मनिर्भर किया। लेकिन इसी हरित क्रांति से खेती-बाड़ी और पर्यावरण में ऐसे-ऐसे नकारात्मक परिवर्तन हुए हैं जो वर्तमान और भावी पीढ़ियों के लिए चिन्ताजनक हैं। जल संकट भी उनमें से एक है। हरित क्रांति का सारा दारोमदार जल पर टिका हुआ है। हरित क्रांति ने जिन फसलों पर अपना ध्यान केन्द्रित किया है वे सभी अधिक जल की मांग करने वाली हैं।

देश में बढ़ते पेयजल संकट का एक कारण सिंचाई जल का कुप्रबंधन भी है। बात को स्पष्ट करने के लिए आइये पहले वैश्विक स्तर पर उपलब्ध जल पर चर्चा कर लें।

हमारी धरती पर उपलब्ध सम्पूर्ण जल का 97.5 प्रतिशत भाग महासागरों में खारे जल के रूप में मौजूद है। यह जल पीने के लिए, खेती के लिए अथवा उद्योगों आदि के लिए उपयोगी नहीं है। इसका पर्यावरणीय महत्व अवश्य है। धरती पर मौजूद कुल जल का मात्र 2.5 प्रतिशत स्वच्छ या मीठा जल है। लेकिन इस स्वच्छ या मीठे जल का 68.7 प्रतिशत भाग ग्लेशियर के रूप में अथवा बर्फ के रूप में ध्रुवों पर जमा हुआ है। शेष जल में 30.1 प्रतिशत भूमिगत और सतह पर नदी, नालों, तालाबों और झीलों आदि में विद्यमान है। जो जल जमीन के ऊपर है उसका 67.4 प्रतिशत भाग झीलों में और मात्र 1.6 प्रतिशत भाग नदियों में विद्यमान है। इस सतह जल का शेष भाग नम मिट्टी, दलदली जमीन, वातावरण और वनस्पतियों में मौजूद है। जहां तक नदियों, झीलों और भूमिगत मौजूद जल के उपयोग का सवाल है, इसका सर्वाधिक 67 प्रतिशत उपयोग खेती के लिए होता है। 20 प्रतिशत घरेलू इस्तेमाल और उद्योग धंधों के लिए तथा 10 प्रतिशत बिजली बनाने के लिए किया जाता है। शेष 3 प्रतिशत हिस्सा वाष्पीकृत हो जाता है। जल स्रोतों से निकाल लिया गया जल जिसका दोबारा उपयोग नहीं होता उसमें 93 प्रतिशत खेती में तथा शेष सात प्रतिशत उद्योगों में व्यय होता है।

उपरोक्त आंकड़ों से यह स्पष्ट हो जाता है कि आज स्वच्छ या मीठे जल का सर्वाधिक इस्तेमाल खेती के क्षेत्र में हो रहा है। इसलिए जल प्रबंधन की

बात करते समय खेती के तौर-तरीकों पर बात करना बहुत जरूरी है। यहां पर हम अपने देश के खेती-बाड़ी के तौर-तरीकों पर चर्चा कर रहे हैं।

हरित क्रांति ने बढ़ाई अधिक जल की भूख

भारतीय कृषि में हरित क्रांति एक महान घटना रही है। इसने देश को भुखमरी से उबारा और अनाज के मामले में देश को आत्मनिर्भर किया। लेकिन इसी हरित क्रांति से खेती-बाड़ी और पर्यावरण में ऐसे-ऐसे नकारात्मक परिवर्तन हुए हैं जो वर्तमान और भावी पीढ़ियों के लिए चिन्ताजनक हैं। जल संकट भी उनमें से एक है। हरित क्रांति का सारा दारोमदार जल पर टिका हुआ है। हरित क्रांति ने जिन फसलों पर अपना ध्यान केन्द्रित किया है वे सभी अधिक जल की मांग करने वाली हैं जैसे धान, गेहूं, गन्ना, केला, कपास आदि। यही नहीं हरित क्रांति ने मिट्टी की सेहत भी बिगाड़ी है। हरित क्रांति वाले क्षेत्रों में अंधाधुंध रासायनिक खादों का इस्तेमाल हुआ। गौ-वंश समाप्त हो गये, गोबर या कम्पोस्ट खाद खेती को मिलनी बन्द हो गयी। नतीजा यह हुआ कि जमीन की जल धारण क्षमता घटती गयी। यही नहीं जो नये संकर बीज निकाले गये वे अधिक पानी की मांग करने वाले थे उदाहरण स्वरूप गेहूं की फसल के लिए 300 मिली. (12 इंच) पानी की आवश्यकता होती है। जबकि गेहूं के उन्नत बीजों के लिए 400 से 1400 मिली. (3 से 5 गुना अधिक) पानी की आवश्यकता होती है।

खेती में बढ़ी हुई पानी की मांग की आपूर्ति के लिए देश में बड़ी-बड़ी नहर परियोजनाओं का जाल बिछाया गया तथा नलकूपों द्वारा भूमिगत जल निकासी के लिए किसानों को प्रोत्साहित किया गया। इतना सब करते हुए यदि पारंपरिक जलस्रोतों जैसे तालाब आदि की उपेक्षा न हुई होती तब भी गनीमत थी। लेकिन ऐसा नहीं किया गया। फल यह हुआ कि भूमिगत जल का अंधाधुंध दोहन तो हुआ लेकिन भूगर्भ से निकाले गये जल की आपूर्ति नहीं

खेतों में सिंचाई के लिए नलकूपों की परम्परा बढ़ गई है

हो सकी। क्योंकि तालाब आदि समाप्त हो चुके थे इस तरह वर्तमान में प्रतिवर्ष देश के बड़े हिस्से में, खासकर गर्मियो में पानी की त्राहि-त्राहि मचती है। यही हाल नदियों का है। गंगा को प्रदूषण मुक्त करने का दावा पूर्ववर्ती सरकारें भी करती थीं। वर्तमान सरकार भी कर रही है। लेकिन यह दावा कभी सच नहीं हो पायेगा। क्योंकि नदियों के साफ जल का बड़ा हिस्सा तो नहरों द्वारा सिंचाई के लिए निकाल लिया जाता है। उनमें बचता है मात्र शहरों के सीवर का गन्दा पानी।

दूसरी जैविक क्रांति की जरूरत

पहली रासायनिक हरित क्रांति के पांच दशक पूरे हो गये हैं। इसने तात्कालिक जरूरतें अवश्य पूरी की हैं लेकिन भावी पीढ़ियों के सामने कई गंभीर सवाल भी खड़े किये हैं। समय की मांग को देखते हुए अब देश में एक दूसरी जैविक हरित क्रांति की जरूरत है। एक ऐसी क्रांति जो रसायनों की निर्भरता और पानी की खपत कम करे तथा किसान, खेत और पर्यावरण हितैषी हो। इसके लिए पहले समस्याग्रस्त क्षेत्रों का चिन्हीकरण करना होगा।

समस्याग्रस्त क्षेत्रों का चिन्हीकरण

जल के मामले में देश के समस्याग्रस्त क्षेत्रों का सर्वेक्षण करके

खेतों में रसायनों और पानी की खपत कम करने के लिए जैविक हरित क्रांति की जरूरत है

सिंचाई के लिए पारम्परिक जल स्रोतों को बढ़ावा देने की आवश्यकता है

यह तो सर्वविदित है कि देश में दालों का अकाल बढ़ता ही जा रहा है। यह विडंबना ही है कि हरित क्रांति आने के बाद ज्यों-ज्यों गेहूं और चावल की उपज बढ़ती गयी त्यों-त्यों दालों का उत्पादन घटता गया। पिछले 24 वर्षों से दालों का आयात किया जा रहा है लेकिन मांग है कि बढ़ती ही जा रही हैं हिन्दुस्तान जहां शाकाहारी लोगों की आबादी बहुत ज्यादा है वहां दाल की उपयोगिता आसानी से समझी जा सकती है।

राष्ट्रीय स्तर पर एक नक्शा बनाने की जरूरत है। ये समस्याग्रस्त क्षेत्र दो तरह के होंगे। एक जहां भूगर्भ जल के अधिकाधिक दोहन से समस्या उत्पन्न हुई है। ऐसे क्षेत्र वे हैं जहां हरित क्रांति अधिक प्रभावी रही है। जैसे पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश सहित देश के अन्य कई क्षेत्र। ये वे क्षेत्र हैं जहां भूमिगत जल का स्तर लगातार नीचे जा रहा है और स्थिति चिन्ताजनक हो चुकी है। दूसरे समस्याग्रस्त क्षेत्र वे हैं जो शुष्क श्रेणी में आते हैं और जहां वर्षा कम होती है। जैसे उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के बीच का बुंदेलखंड क्षेत्र।

उक्त दोनों तरह के क्षेत्रों के लिए कृषि संबंधी अलग-अलग तरह की योजनाएं बनानी होंगी। आवश्यकतानुसार कानून भी बनाने पड़ेंगे। हरितक्रांति वाले क्षेत्रों में भूगर्भजल का लगातार नीचे जाने का मुख्य कारण है भारी मात्रा में भूगर्भ जल को सिंचाई के लिए निकालना। इन क्षेत्रों में सिंचाई हेतु लगने वाले नलकूपों को दी जाने वाले सब्सिडी बन्द करनी होगी; अधिकाधिक जल की मांग करने वाली फसलों को हतोत्साहित करना होगा और मोटे अनाजों और दलहन आदि फसल, जो पानी कम मांगती हैं, को प्रोत्साहित करना होगा। इन क्षेत्रों में भूर्गभ जल रिचार्ज हो सके इसके लिए तालाबों का निर्माण और रख-रखाव पर विशेष ध्यान दिये जाने की जरूरत है। इन क्षेत्रों के अधिकांश तालाबों पर अवैध कब्जे हो चुके हैं। इन अवैध कब्जों को सख्ती के साथ हटा दिया जाना चाहिए अथवा उनसे भारी जुर्माना वसूल करके एक कोष बनाया जाना चाहिए जिसका इस्तेमाल तालाबों के रखरखाव के लिए किया जाना चाहिए।

लाभकारी है मोटे अनाजों की खेती

बुंदेलखंड जैसे शुष्क क्षेत्रों के किसानों की स्थिति बहुत दयनीय है। वहां से अक्सर किसानों द्वारा आत्महत्या की खबरें आती रहती हैं। यह ऐसा क्षेत्र है जहां वर्षा कम होती है, सिंचाई की सुविधाएं कम हैं और पारंपरिक जलस्रोत तालाब आदि रखरखाव के अभाव में अप्रासंगिक हो गये हैं। यहां रात-दिन मेहनत करके किसान जो मोटे अनाज, दलहन, तिलहन आदि पैदा भी करता है उसका उसे लाभकारी मूल्य नहीं मिलता है। ऐसे शुष्क क्षेत्रों में खेती के तौर-तरीके और सरकारी नीतियां अलग-अलग तरह की होनी चाहिए। यहां वर्षा जल की एक-एक बूंद को सहेजने का इंतजाम तो होना ही चाहिए। साथ-साथ फसलों का चुनाव भी अन्य क्षेत्रों से अलग होना चाहिए। ऐसे क्षेत्र दलहन, तिलहन और मोटे अनाजों के लिए आदर्श उत्पादन स्थल हो सकते हैं।

यह तो सर्वविदित है कि देश में दालों का अकाल बढ़ता ही जा रहा है। यह विडंबना ही है कि हरित क्रांति आने के बाद ज्यों-ज्यों गेहूं और चावल की उपज बढ़ती गयी त्यों-त्यों दालों का उत्पादन घटता गया। पिछले 24 वर्षों से दालों का आयात किया जा रहा है लेकिन मांग है कि बढ़ती ही जा रही हैं। हिन्दुस्तान जहां शाकाहारी लोगों की आबादी बहुत ज्यादा है वहां दाल की उपयोगिता आसानी से समझी जा सकती है।

आज खुले बाजार में गेहूं जहां 18-20 रुपये किलो के आस-पास बिक रहा है वहीं चना करीब सौ रुपये के आस-पास है। अरहर की दाल तो डेढ़ सौ रुपये किलो तक पहुंच गयी है।

दलहन, तिलहन और मोटे अनाज कभी गरीब आदमी का मुख्य भोजन हुआ करते थे आज आसमान छूती कीमतों के कारण ये चीजें गरीबों की पहुंच से बाहर हो गयी हैं। ये मोटे अनाज सेहत के लिए उपयोगी तो हैं ही इनके उत्पादन में जल की खपत भी बहुत कम होती है। रासायनिक खादों की भी कोई खास आवश्यकता नहीं होती। इस तरह की फसलों का उत्पादन स्वास्थ्य और पर्यावरण हर तरह से उपयोगी है। सरकार को इस दूसरी जैविक क्रांति के लिए अभियान शुरू करना चाहिए।

संपर्क करें:
विजय चितौरी
विज्ञान परिषद प्रयाग,
महर्षि दयानन्द मार्ग
इलाहाबाद (उ.प्र)-211 002
मो.नं. 9792862303
ईमेलः gawnkinaiawaj@gmail.com